IJAER/ May-June 2023/Volume-12/Issue-3 ISSN: 2278-9677
International Journal of Arts & Education Research

हिंदी उपन्यासों में स्त्री विमर्श

Neeta Devi
Research Scholar
Department of Hindi
Kalinga University Raipur

Dr Vinod Kumar Yadav
Associate Professor
Department of Hindi
Kalinga University Raipur

सार

दुनियाँ भर में नारी मुक्ति आंदोलनों की गुँज, समता समानता, आजादी जैसे छलावे भरे खूबसूरत नारों, तमाम महिला संगठनों की सक्रियता और प्रगतिशीलता की कोशिशों के बावजूद पुरूष प्रधान समाज में औरतों की जिन्दगी में कोई बेहतर बदलाव नहीं आ सका है। बाहर-भीतर शोषण, प्रताड़ना, अपमानित किये जाने का सिलसिला अब भी जारी है। उसके सपने पिता से पति की देहरी तक कैद है और आदर्श, त्याग, समर्पण, बलिदान, सहनशिलता के सारे उपदेश उसी तक केन्द्रित हैं। अपने अधिकारों इच्छाओं, अभिलाषाओं के लिए कोई जगह नहीं है। हर मोड, हर मुक्काम पर उसे किसी न किसी रूप में मानसिक, शारीरिक प्रताड़ना मिलती रही है। फिर भी हजारों दुःख दर्द दिल में समेटे समाज के क्रूर पाश्विक व्यवहार को बर्दाश्त करती हुई पतित-पावनी की तरह बहती चली आ रही है। जंजीरों में बंधे कैदी की तरह अब वह जीवन नहीं बिताएगी, यह विरोध उसके स्वरूप को बदलने लगा है। आधुनिकता के परिदृश्य में नारी के बढ़ते कदम को देखकर अक्सर यह आरोप लगाया जाता है कि नारी - नारीत्त्व से दूर होती हुई पुरूष बनती जा रही है। आखिर ऐसा क्यों ? स्त्री-पुरूष परस्पर पुरक होकर भी दो स्वतंत्र इकाइयाँ है। दोनों का स्वतंत्र अस्तित्त्व है, फिर दोनों की स्वतंत्र अस्मिता क्यों नहीं ? यह प्रश्न उसके मन मस्तिष्क को झकझोरनें लगा है। जाग उठा है उसका अभिमान स्वाभिमान, उत्पन्न हो गयी है उसमें कुछ नया कर दिखाने की चाह। यही कारण है कि आज उसका स्वरूप बदला हुआ-सा प्रतित हो रहा है। समय के साथ बदलते परिवेश में महिलाओं का स्वरूप बदला है और उसका अंकन ही महिला उपन्यासकारोंने उपन्यास साहित्य में किया है।

मुख्य शब्दः *स्त्री विमर्श, नारी - नारीत्त्व*

परिचय

'आजादी के लगभग छह दशक बीतने के बाद भी भारतीय समाज और उसका परिवेश अनेकानेक समस्याओं में ग्रासित है। इन समस्याओं के कारण जीवन के सामाजिक, आर्थिक राजनीतिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक क्षेत्र में आये तेज परिवर्तनों को दृष्टिगत करना सामान्य बात नहीं है। साहित्य परिवेश की देन है, इसलिए अपने पूरी परिवेश से जुड़कर साहित्य-रचना करना एक जागरूक और संवेदनशील रचनाकार के लिए अत्यंत आवश्यक होता है। कहना न होगा कि ऐसी स्थिति में साहित्यकार सामाजिक विसंगतियों को ध्यान में रखकर रचनाएँ प्रस्तुत करता है। जिस रचनाकार में अपने परिवेश को पकड़े की जितनी

उत्कट लालसा और समसामायिक समस्याओं की जितनी गहरी पहचान होगी, उसकी रचना उतनी ही अधिक प्रासंगिक, समसामायिक और कालजयी होगी।"

समकालीन भारतीय साहित्य में स्त्रि विमर्श भारतीय समाज की विसंगतियों की उपज है। इसमें पहली चीज तो स्त्रियों में अपने प्रति किये जानेवाले अन्याय का प्रतिकार करना ही है और यह तत्त्व हर स्त्री में विद्यमान रहता है। आज के बदले हुए परिवेश में स्त्रियों से जुड़े सवालों को अनदेखा करना तो अब आरम्भ ही हो गया है। क्यों कि इसमें असंख्य लोगों की कम-ज्यादा भागीदारी है।

साहित्यकार युग का प्रतिनिधी होता है। अतः उसकी रचनाओं में युगीन स्थितियों और समसामायिक परिस्थितियों का दबाव बराबर बना रहता है। काल, सन्दर्भ, प्रकरण, परिस्थिति को समझे बिना इतिहास और संस्कृति में डूबे बिना किसी रचना को खारिज कर देना या उस प्रथा या परम्परा पर प्रहार करना प्रबुद्धता नहीं है। उदाहरणार्थ सती-प्रथा तत्कालीन युग की माँग थी। उस समय उसे स्वीकार करने के अतिरिक्त कोई विकल्प ही नहीं था लेकिन आज कोई सती प्रथा को प्रोत्साहित करे अथवा तत्कालीन परम्परा के महिला मंडल का विरोध करे, दोनों स्थितियाँ भर्त्सना योग्य है। 'स्त्री - विर्मश ' एक मूल्य है, एक आन्दोलन है, जो साठोत्तरी हिन्दी उपन्यासों कहानियों और कविता के विराट फलक पर अपनी पहचान बनाता है। स्त्री विमर्श चेतनात्मक मूल्य, आक्रोश, चीख, वेदना, पीड़ा, चुभन, घुटन, छटपटाहट, और शोषण उत्पीड़न के दर्द को उसके वैविध्य के साथ साहित्यकारोंने बड़ी गम्भीरता एवं आत्मीयता के साथ उकेरा है। स्त्री विमर्श को नारीवादी सिद्धांत या स्त्रीवाद भी कहा जाता है। इसमें स्त्री केन्द्रित ज्ञान की चर्चा परिचर्चा होती है।

१९७५ के बाद निर्मित हिंदी साहित्य पर दृष्टिक्षेप डाले तो यह दिखाई देता है कि यहाँ स्त्री समस्याओं के प्रति जागृत दृष्टिकोण रखकर स्त्रीयों की स्थिति में सुधार लाने के लिए प्रयास किए गए है। मानव समाज में स्त्रियों की संख्या लगभग ५० प्रतिशत के आसपास है। स्त्री पुरूषों के साथ हजारों सालों से विभिन्न अनुभवों के साथ जीवन व्यतीत कर रही है। लेकिन इतिहास पर दृष्टि डाले तो यह दिखाई देता है कि स्त्रियों के अस्तित्त्व को हमेशा नकारा गया है। आज कुछ वर्षों से स्त्रियों की समस्याओं एवं उसकी परिस्थितियों के संदर्भ में विस्तार से अध्ययन हो रहा है। स्त्री के व्यक्तित्त्व के निर्माण के लिए संघर्ष हो रहा है। स्त्री चाहे पाश्चात्य हो, चाहे भारतीय अपने अस्तित्त्व के लिए उसे लंबा संघर्ष करना पड़ा है। भारतीय स्त्री मुक्ती के संघर्ष में विभिन्न समाज सुधारकों का, सामाजिक संस्थाओं का, साहित्य का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है।

समाज में स्त्री के प्रति जागृति निर्माण करना तथा स्त्री के स्वत्त्व को, अस्तित्त्व को स्थापित करने के प्रयास अर्थात स्त्रीवाद है। स्त्रीवादी विचारधारा से प्रभावित साहित्य स्त्रीवादी साहित्य कहलाता है। नारी के व्यक्तित्त्व के पहचान के लिए आन्दोलन हो रहे हैं। इस समस्त संघर्ष का एक मात्र मुख्य उद्देश्य नारी के लिए सुखद भविष्य निर्माण करना है। स्त्री को निष्पक्ष न्याय तथा उनके प्रति स्वस्थ दृष्टिकोण के निर्माण के लिए समाज में व्याप्त लिंग भेद समाप्त करने का कार्य इन विभिन्न आंदोलनों के अन्तर्गत होने लगा। स्त्री के स्थिति के पीछे मात्र उसका स्त्री जन्म है। स्त्री जन्म से स्त्रीत्त्व का भाव लेकर नहीं आती बल्कि उसके आसपास का परिवेश उस इस मानसिकता में परिवर्तित करता है।

" नर और नारी की मानसिक भिन्नता का अनेक प्रकार से विश्लेषण करने पर पता चलता है कि नारी की मानसिकता उसकी शारीरिक संरचना विशेष के कारण ही नर से भिन्न नहीं है। सामाजिक परिवेश, पारिवारिक तथा व्यक्तिगत परिस्थितियाँ, संस्कार और मूल्य, सब मिलाकर नारी मानसिकता की निर्मिती करते है। " " जन्म से लेकर शैशवास्था तक नर और नारी की मानसिकता में कोई अंतर नहीं होता है। समाज के इसी मानसिकता के परिवर्तन की प्रक्रिया का साहित्य पर गहरा प्रभाव दिखाई देता है। साहित्य के माध्यम से नारी के स्वत्त्व की पहचान करने के प्रयास आरम्भ हुए उसे ही स्त्रीवाद या स्त्री-विमर्श कहा जाता है। मूलतः अमेरिका में निर्मित स्त्रीवाद का प्रचार-प्रसार १९६० के पश्चात बड़ी तेजी से हुआ। सन १९७६ के आंतरराष्ट्रीय महिला वर्ष के बाद स्त्रीमुक्ति आन्दोलन तथा स्त्रीवादी विचारधारा को नयी दिशाएँ प्राप्त हुई। समाज व्यवस्था ने लिंग भेद के आधार पर स्त्री को कनिष्ठ स्थान प्रदान किया था। उसपर गहरा विचार विनिमय हुआ। आरंभ में स्त्री के हाथों में सभी अधिकार केंद्रित थे। लेकिन मातृसत्ताक कुटुंबव्यवस्था जब पितृसत्ताक कुटुंबव्यवस्था में परिवर्तित हो गयी तब जब उसे धार्मिक, सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक कार्यों में सहभागी किया जाता था। उसके जीवन का उज्ज्वल पक्ष मात्र अतीत बनकर रह गया। औरत की इस बदलती स्थिति के संदर्भ में एंगेल्स ने कहा है... "मातृसत्ताक से पितृसत्ताक का अवतरण वास्तव में औरत जाति की सबसे बड़ी हार थी। सत्य तो यह है कि स्त्री के लिए ऐसा स्वर्णयुग वास्तव में एक मिथक के अलावा और कुछ नहीं। यह कहना की स्त्री की अन्य है, इस बात को सिद्ध करता है कि स्त्री और पुरूष में कोई पारस्पारिक संबंध नहीं था। वह चाहे धरती थी, चाहे माता, देवी किन्तु पुरूष की संगी, मित्र कभी नहीं थी।" " पुरूष ने स्वयं की सुविधा के अनुसार स्त्री को विभिन्न रूपों में प्रस्तुत किया लेकिन उसने नारी को अपने सामने कभी नहीं बनने दिया। पाश्चात्य या भारतीय विद्वानों के स्त्री संबंधी विचारों को देखने पर यह स्पष्ट होता है कि तत्कालीन समाजव्यवस्था स्त्री का क्या स्थान था। पाश्चात्य देश या भारतीय परिवेश हो, कोई भी धर्म हो, औरत मात्र उपेक्षा एवं बंधनों को ही सहज ही दिखाई देती है। पाश्चात्य विद्वान पाइथागोरस के अनुसार, "जो अच्छे सिद्धांत है, वो पुरूष की व्यवस्था एवं उजाले को जन्म देते है तथा अव्यवस्था, अंधेरा औरत को जन्म देते हैं। मनु संहिता के अनुसार स्त्री एक निकृष्ठ वस्तु है, जिसे बंधनों में रखा जाना चाहिए। रोमन कानून औरत को संरक्षण में रखने के लिए कहता है, ताकि उसकी मूढ़ता पर लगाम लगाई जा सके। कैनन का कानुन औरत को शैतान कहता है, जबकि कुरान औरत के प्रति भयानक उपेक्षा रखता है। सदियों से सहते आये इन बन्धनों एवं अत्याचारों का एहसास स्त्री को धीरे- धीरे होने लगा। आधुनिक कालखण्ड तक आते-आते स्त्री को अपने स्व के अस्तित्त्व की पहचान होने लगी। अपनी अस्मिता की पहचान के कारण उसके विचारों में परिवर्तन होने लगा। "एक लम्बी, पुरानी स्थापित व्यवस्था को तोड़कर जनसंघर्ष से जुड़ा और कदम पर यथार्थ मुठभेड़ करना अस्मिता की पहचान का तकाजा है।' आज तक स्त्री पुरूष को अपना सर्वेसर्वा समझती थी लेकिन आज उसने अपने सामर्थ्य को पहचान लिया। द्वितीय विश्वयुद्ध के काल में बाहर निकली स्त्री को युरोप में युद्ध समाप्त होने के पश्चात जब फिर से घर में कैद करने का प्रयास किया गया तब अपने सामर्थ्य को पहचान चुकी स्त्री ने विरोध किया। विभिन्न आन्दोलनों से संघर्ष करने लगी। उसमे मानसिक तथा वैचारिक परिवर्तन हुआ। उसकी इस विचारधारा को स्त्रीवाद कहा गया।

युरोप में इस विचारधारा के बीज समस्त विश्व के रूप में स्वीकृत है। स्त्रीवादी विचार धारा का भारत में व्यापक प्रसार है। तुलनात्मक दृष्टिकोन से भारतीय स्त्री पाश्चात्य स्त्री से अधिक हीन दृष्टिकोन का शिकार है। स्त्री को कभी देवी बनाकर कभी माँ बनाकर उसकी पुजा की जाती है, तो कभी उसे दासी बनाकर

बन्धनों में जकड़कर उसकी दुनिया को सिमित बनाया गया। आधुनिककाल में स्त्री आर्थिक दृष्टिकोण से स्वावलंबी बन गयी है। लेकिन यथार्थ यह है कि आज भी उसकी स्थिति में कोई परिवर्तन नहीं है। घर और बाहर इन दो स्तरों पर वह उपेक्षा का शिकार हो रही है। भारतीय स्त्री इन स्थितियों से जाते हुए स्वयं के संदर्भ में सोचने लगी और इसी पार्श्वभूमी पर यहाँ स्त्रीवादी आन्दोलन का आरंभ हुआ।

भारतीय तथा पाश्चात्य स्त्रीवादी आंदोलन के ध्येय अलग-अलग दिखाई देते है। पुरूष के समान समाज में स्थान प्राप्त करना इनका उद्देश्य है, लेकिन पाश्चात्य स्त्री की सबसे बड़ी समस्या आर्थिक स्वतंत्रता की है। उसे केन्द्र में रखकर पाश्चात्य स्त्रीवाद आगे बढ़ रहा है। भारतीय स्त्री धर्म, समाज, राजनीति, अर्थव्यवस्था, परिवार आदि सभी क्षेत्रों में जकड़ी दिखाई देती है। भारतीय स्त्रीवाद इन स्तरों पर संघर्ष कर रहा है।

स्त्रीवाद का स्वरूप :

प्रसिद्ध फ्रेंच लेखिका 'सिमोनद बोआ' ने नारी की स्थिति को स्पष्ट करते हुए 'द सेकंड सेक्स' नामक पुस्तक लिखी। उन्होंने यहाँ नारी संबंधित विचार व्यापक रूप में प्रस्तुत किए। सबसे पहले तो उन्हें स्त्री का स्त्री होना स्वीकार नहीं है। समाज का परिवेश, परिवार नारी को नारी बनाये रखने के लिए जिम्मेदार है। सिमोन ने कहा है, औरत को औरत होना सिखाया जाता है। औरत बनी रहने के लिए अनुकूल बनाया जाता है।" पुरूष प्रधान समाज व्यवस्था बचपन से एक लड़की को स्त्रीत्त्व के गुण को सिखाकर तथाकथित आदर्श नारी के रूप में ढालती रहती है। इस आदर्श के विरोध में जो व्यवहार करता है, उसे यह व्यवस्था भटकी हुई या औरत, औरत नहीं रही इस तरह से कोसती है। परम्परा से नारी का जो रूप प्रस्तुत किया जा रहा है, क्या वह सही है ? इसकी तलाश करना जरूरी है और यह तलाश अर्थात स्त्रीवाद है। सिमोन ने कहा है, "आज की दुनिया में औरत का सही और सही रूप वस्तुतः क्या है ? वस्तुतः उसका कौनसा दर्जा होना चाहिए।" ँ१९४१ में उठाये गये सिमोन के सवालों का जवाब सभी स्त्री मुक्ति विचारधारा को स्वीकार करनेवाले ढूँढ रहे हैं।

नारी के परम्परागत रूप को ही आज प्रस्तुत किया जाता है। परिणामस्वरूप नारी के प्रति चली आ रही मानसिकता और वैचारिकता में परिवर्तन नहीं रहा है। उसे परम्परागत बन्धनों के घेरे से बाहर निकालकर एक मानव के रूप में प्रस्तुत करना जरूरी है। यह व्यवस्था उसे साधन के रूप में प्रस्तुत करती आ रही है। नारी को मानव के रूप में प्रस्तुत करना स्त्रीवाद का प्रमुख ध्येय है। सिमोन के अनुसार, "जब हम मानव शब्द का उच्चारण करते है, तो उसमे पुरूष और स्त्री दोनों समाहित होते हैं।""

समाज में नारी को कनिष्ठ दर्जा दिया गया है और उसके विकास में अनेक बाधाएँ निर्माण की जाती है। उसकी इस गौण स्थिति में परिवर्तन कर उसे पुरूष के समान स्थान देना ही स्त्रीवाद है। पाश्चात्य इतिहासकार लिंडा गार्डन के शब्दों में, "नारीवाद नारी गौण स्थान का विश्लेषण मात्र है, जिसका हेतु उसकी स्थिति में बदलाव लाना मात्र।" सभी रूकावटों को पार कर नारी अपने स्वयं के विकास के लिए आज प्रयत्नरत है।

इसके लिए उसे संघर्ष का सामना करना पड़ा है। पाश्चात्य विद्वान एलिस जार्डिन के नुसार, "नारीवाद स्त्रियों की दृष्टि से स्त्रियों के लिए किया गया आंदोलन है।" "नारी की स्थिति में परिवर्तन लाने के लिए सर्व प्रथम उसे शरीर से परे देखना आवश्यक है। पुरूष प्रधान संस्कृति में स्त्री को भोग्या के रूप में

देखा जाता है। स्त्री में जो गुण है, कौशल्य है उसे भुलाकर मात्र उसके रंग एवं रूप को देखा जाता है। जिस दिन स्त्री के गुणों को स्वीकृत किया जाएगा उसी दिन उसे एक व्यक्ति का स्थान प्राप्त होगा। बांगला लेखिका तस्लीमा नसरीन के अनुसार, "जिस दिन यह समाज स्त्री शरीर का नहीं, शरीर के अंग प्रत्यंग का नहीं, स्त्री की मेधा और श्रम का मूल्य सीख जाएगा, सिर्फ उस दिन स्त्री मनुष्य के रूप में स्वीकृत होगी।

नारी परम्परा से अपने आप को घर की चारदीवारों में कैद करती आ रही। अपना घर परिवार उसका समस्त घर संसार है। लेकिन आज धीरे-धीरे नारी बाहरी जगत के सम्पर्क में आकर अपने सामर्थ्य को पहचान रही है। नारी को घरेलु मानसिकता से बाहर निकलने के लिए समस्त समाज में जागरण आवश्यक है। महिलाओं के सामाजिक जीवन के प्रत्येक जागरण और क्रिया कलापों की सहायता करनी चाहिए ताकि वे अपने कूपमंडूक आत्मकेंद्रित घरेलू और पारिवारिक मानसिकता से बाहर आ सके। समाज में विभिन्न स्तरों पर नारी को अन्याय-अत्याचार का सामना करना पड़ता है। इनका विरोध आरम्भ हो चूका है। डॉ. विद्युत भागवत ने स्त्रीवाद को स्पष्ट करते हुए कहा है, "वैयक्तिक, सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक स्तरों पर स्त्री पर जो अन्याय-अत्याचार के विरोध में संघर्ष की तैयारी रखना ही स्त्रीवाद को अपनाना है। दूसरी ओर मराठी की समीक्षक उषा शिंदे स्त्रीवाद का स्वरूप स्पष्ट करते हुए स्त्री को भोग्या वस्तु के रूप में देखने की अपेक्षा मानव रूप में देखना कितना अनिवार्य है यह स्पष्ट करती है। वह कहती है, "कानून रूढ़ि संस्था और जनमत सभी स्तरों पर नारी को मानवता का मूल्ययुक्त अधिकार दिलाने के लिए सुझ बूझ के साथ लड़ी जानेवाली राजनीतिक लड़ाई को स्त्रीवाद कहा जा सकता है।

स्त्रीवाद के संदर्भ में समाज में गलत दृष्टिकोण दिखाई देते है। सामान्यतः यही सोचा एवं समझा जाता है कि स्त्रीवादी आन्दोलन नारी को पुरूष से अलग करने के लिए या नारी को पुरूषों पर वर्चस्व स्थापित करने के लिए छेड़ा गया आन्दोलन है। डॉ. भारती जाधव के अनुसार स्त्रीमुक्ति आन्दोलन पुरूष के विरोध में आन्दोलन न होकर वह जुल्म जबर्दस्ती की प्रवृत्ति के विरोध की लड़ाई है। सहयोग और सहजीवन की माँग करनेवाला एक आन्दोलन है। समाज अधिकारों की माँग करनेवाला और मात्र पुरूष के रूप में पैदा होने के कारण उसे जो अधिकार मिल गये है और मात्र स्त्री का शरीर मिलने के कारण वह अधिकार न देनेवाले समाज के विरोध में यह विद्रोह है। लिंगभेद को आधार बनाकर स्त्री को विभिन्न अधिकारों से वंचित रखा गया है। स्त्रीवादी विचारधारा का लक्ष्य ऐसी समाज रचना का निर्माण करना है जो नारी के प्रति व्यापक दृष्टिकोन रखता है।

स्त्रीवाद यह संकल्पना किसी एक विचार पर आधारित न होकर, उसमें अनेक विचार समाहित है। इसका स्वरूप अत्याधिक व्यापक है। विभिन्न विचारों को सामने रखकर स्त्रीवाद के स्वरूप के संदर्भ में निष्कर्ष रूप में हम कह सकते हैं कि स्त्रीवाद अर्थात पुरूषों के विरोध में संघर्ष न होकर जैविक, सामाजिक, मानसिक, आर्थिक और राजनीतिक स्तरों पर स्त्री को जो कनिष्ठ स्थान दिया जाता है उसे नष्ट कर पुरूषों के समान स्थान प्राप्त करके अपने अस्तित्त्व की अलग पहचान निर्माण करना है।

उद्देश्य

1. समकालीन भारतीय साहित्य में स्त्रि विमर्श भारतीय समाज की विसंगतियों की उपज है।

2. स्त्रीवाद अर्थात पुरूषों के विरोध में संघर्ष न होकर जैविक, सामाजिक, मानसिक, आर्थिक और राजनीतिक स्तरों पर स्त्री को जो कनिष्ठ स्थान दिया जाता है

स्त्रीवाद आन्दोलन :

यह आन्दोलन किसी भी तरह से और किसी भी रूप में प्रतिशोध पीड़ित नहीं है। इस आन्दोलन से जुड़ी हुई स्त्रियाँ मनुष्य ही है। इन्हें न्याय, स्वतंत्रता, समानता और भगिनीभाव चाहिए। ये स्त्रियाँ अच्छी तरह जानती है कि अन्याय का प्रतिकार अन्याय नहीं एक दमन, शोषण और उत्पीड़न का जवाब दूसरा दमन, शोषण और उत्पीड़न नहीं।

स्त्रीवाद की समर्थक स्त्रियाँ पुरूष नहीं बनना चाहती। ये स्त्रियाँ अपनी विशिष्ठ दैहिक, मानसिक और भाषिक संरचना पर गर्व करती है। इनके लिए जो प्राकृतिक विशिष्टताएँ है, वे शर्मनाक नहीं, शर्मनाक आरोपित सामाजिक मानदण्ड है जो दोहरे है और जिन पर पुनर्विचार होना ही चाहिए ताकि विकास के अवसर सबको समान मिल सके।

स्त्री और पुरूष की लड़ाई का व्याकरण सामन्तों, आसामियों, पूँजिपतियों, मजदूरों, औपनिवेशिक ताकतों और शोषितों के बीच की लड़ाई के व्याकरण से अलग है। इसलिए इसकी तुलना दो वर्गों, दो नस्लों, दो जातियों, दो दलों या दो राष्ट्रों के बीच की लड़ाइयों से नहीं की जा सकती।

यह एक ऐसी लड़ाई है जिसमें सत्ता का हस्तांतरण उतना महत्त्वपूर्ण मुद्दा नहीं जितना दृष्टियों और व्यक्तियों का शान्तिपूर्ण सह-अस्तित्व और सांमजस्य। यह आन्दोलन वहाँ-वहाँ उँगली रखता है, जहाँ-जहाँ मानदण्ड दोहरे हैं।

स्त्रीवाद : परिभाषा और परिव्याप्ति :

समकालिन सामाजिक-राजनैतिक क्षेत्र में व्याप्त विसंगतियाँ साहित्य की सभी विधाओं में दृष्टिगत होती है। स्त्रीवाद उन्हीं विसंगतियों की देन है। तत्कालीन साहित्यकारों, पाठकों, आलोचकों और समाजशास्त्रीयों का ध्यान सबसे अधिक अपनी तरफ आकर्षित स्त्रीवाद ने किया है। स्त्रीवाद के विषय में स्त्री तथा पुरूष साहित्यकारों ने निम्नलिखित परिभाषाएँ दी हैं

स्त्रीवाद में नारी मुक्ति की समस्या को उठाया गया है। नारी शोषण की समस्या एकांगी नहीं है। वह युगीन शोषण तन्त्रों, सामाजिक, राजनीतिक ढाँचों, आर्थिकपरिस्थितियों और उन सबकी उपज सांस्कृतिक धार्मिक मूल्यों और नेतिकअवधारणाओं का एक अंग है। "

"नारी जीवन और शरीर पर नारी के अधिकारों का दावा होना चाहिए। पुरूष समाज के विधान में परवश होकर एक गुलाम और शोषित का वह जीवन धर्म क्यों स्वीकार करें ? स्त्रीवाद इसी विचारधारा का चित्रण है।'

आज का नारी लेखन हमारी मानसिक तुष्टि के लिए एक विस्फोटक द्रव के समान है। हमारी शान्ति को भंग करनेवाला और कष्टदायक। यह हमारी प्राचीन मान्यताओं और मानसिक जड़ता को गति देनेवाला एक ऐसा विध्वसंक शक्ति के रूप में प्रकट हुआ है जो हमें फिर से नये निर्माण के लिए प्रेरित करता है।

आज की स्त्रीयाँ क्रीतदासी नहीं है, न तो पुरूषों की आश्रिता बनकर जीवन जीनाI चाहती है। वह वेश्याओं का विलास भी नहीं है। भोग के भान - भीन्न सुखों और रसों के लिए साधन मात्र भी नहीं है। वह परम्पारित परिवार की पत्नी - दासी भी नहीं है।

वह वंश - रथ की धुरी खींचने के लिए बछड़े उत्पन्न करनेवली गाय भी नहीं है जिसे जब चाहो, जब तक चाहो दुहों नहीं तो कसाई के हाथ बेच दो। स्त्री-विमर्श ने एक अत्यन्त तेजस्वी नारी को अपना विषय वस्तु बनाया है। जन्म पर आधारित, विषमतामूलक वर्णाश्रम, धर्म और वंश शुद्धि पर जोर देनेवाली अन्याय-अत्याचारी वशिष्ठी परम्परा में स्त्री सर्वथा पराधीन, पुण्यवस्तु व दासी ही रही है। स्त्रीवाद की स्त्री इसी हकीकत का जीवन्त दस्तावेज है।

अति विलास, अति वैभव, अति सफलता और उसके लिए चुकाये जाते मूल्य, किये जाते घिनौने समझौते अन्ततः नारी को कितना खोखला, कितना कंगाल, कितना दयनीय बना देते हैं उसका मूर्तिमन्त उदाहरण है स्त्रीवाद।”

औरते स्त्रित्त्ववाद की न केवल कर्ता है बल्कि वे ही शक्ति है और एक औरत के रूप में एक औरत होकर स्त्रीत्त्ववाद के सत्ता विमर्श को अर्जित करना उसका सार है, क्यों कि तभी वह कर्ता बन सकती है। "

" स्त्री-विमर्श स्त्री ने स्त्री होने के नाते, सहे हुए आघातों से मुक्ति तथा मनुष्य के रूप में व्यवहार कर सकने और उसी प्रकार का व्यवहार पाने के लिए स्त्री की जद्दोजहद की प्रक्रिया है।'

नारी मुक्ति की अवधारणा के इर्द-गिर्द रचे गये साहित्य को ही स्त्रीवाद माना गया है। उपर्युक्त परिभाषाओं के विवेचन-विश्लेषण के बाद निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि स्त्रीवाद स्त्री की पहचान को निर्मित करनेवाली ऐतिहासिक प्रगति में विश्वास रखता है। स्त्री अपने सार्वभौमिक, राजनीतिक उद्देश्यों एवं आदर्शों के साथ, अपनी आपसी भिन्नताओं को मद्देनजर रखते हुए भी जगत में एक भाव से अवस्थित है। अपने प्रसस में अपनी विशिष्ट जरूरतों के अनुसार उसने आधुनिक युग के आदर्शों में परिवर्तन जरूर किया है किन्तु विरासत को अपनी देन को सम्पूर्ण रूप से नकारा नहीं है। इसी प्रकार स्त्रीवाद भी किसी भी प्रकार के अशरीरी, वायवीय दृष्टिकोण के खिलाफ है।

स्त्रीवाद के उद्देश्य :

सामाजिक परिवर्तन का आन्दोलन :

नारी की स्थिति में सुधार लाने के लिए समस्त समाज में परिवर्तन अनिवार्य है। स्त्री एवं पुरूष में लिंगभेद को आधार बनाकर अंतर निर्माण करने की प्रक्रिया सामाजिक है। बचपन से स्त्री के अंदर हीन का भाव निर्माण किया जाता है। यह व्यवस्था स्त्री को दबाकर उसे अन्धा बनाती आयी है। स्त्रीवादी विचारधारा उस

व्यवस्था को परिवर्तीत करना चाहती है। इस व्यवस्था को बदलकर ही नारी बन्धनों से मुक्त होगी। समाजव्यवस्था के परिवर्तन से स्त्री की मानसिकता में अपने आप परिवर्तन हो जाएगा।

स्त्री को मानव / के रूप में प्रतिष्ठित करना :

आरम्भ में नारी को समाज में महत्त्वपूर्ण स्थान था। उसका भी स्वतंत्र अस्तित्त्व था। लेकिन धीरे-धीरे स्थितियों में परिवर्तन हुआ और नारी मात्र साधन या भोग्या बनकर रह गयी। " सुदेश बत्रा के अनुसार न जाने कब इतिहास की अँधी गलियों में नारी को पुरूष की छाया और अनुगामिनी बना दिया। वह स्वतंत्र व्यक्ति नहीं, वह प्रथम पंक्ति का व्यक्तित्त्व नहीं, वह मात्र अन्या है। पुरूष ने उदार होकर उसे इतिहास संस्कृति, परंपरा और मर्यादा के नाम पर देवी पद दिया है। समाज स्त्री को कभी माँ, बेटी, पत्नी तो कभी देवी के रूप में स्वीकार करता है किंतु मानव या व्यक्ति के रूप में नहीं। मानव या व्यक्ति के रूप में उसकी इच्छाएँ हो सकती है यह बात समाज आसानी से भूल गया है। स्त्रीवाद नारी को एक सामान्य मनुष्य के रूप में स्थापित करता है।

नारी की विभिन्न समस्याओं पर विचार :

नारी अपने जन्म से लेकर मृत्यु तक विभिन्न समस्याओं का सामना कर रही। है। अन्याय अत्याचार की यह परम्परा लम्बी है। डॉ. अमरज्योति के अनुसार, "अनादिकाल से नारी जाति समाज में चहुँमुखी शोषण का शिकार बनी रही है।" "आधुनिक कालखंड की नारी कदम-कदम पर अनगिनत समस्याओं से संघर्ष कर रही है। नारी की सबसे बड़ी समस्या उसका शरीर है और इससे निर्मित अनके समस्याओं को स्वीकार करना उसकी निर्यात बन गयी है। नारी इन समस्याओं की इतनी आदि बन गयी है कि उसे इन समस्याओं का एहसास तक नहीं है। स्त्रीवाद ने नारी को इन समस्याओं के प्रति जागृत किया। इस आन्दोलन के द्वारा स्त्री ने स्वयं को दमित के रूप में पहचाना और अंततः दमित होने की नियति से इंकार किया

अन्याय, अत्याचार एवं शोषण के विरोध में संघर्ष :

नारी सदियों से शोषण का शिकार रही है। आज स्त्री घर और बाहर दोनों स्तरों पर शोषण का सामना कर रही है। समाज के निम्न वर्ग में भी नारी का स्थान कनिष्ठ। इस समाज में अलग-अलग नियम बनाकर नारी शोषण किया जा रहा है। प्रभा खेतान अनुसार, "धर्म और संस्कृति की नजर स्त्री के प्रति हमेशा टेढ़ी रही, राजनीति उसे हमेशा मोहर बनाती रही और व्यक्ति पुरूष ने उसे कभी ड्राइंगरूम का सामान समझा, तो कभी बेडरूम का बिछावना, पुरूष चाहे कहीं भी हो, कोई भी हो वह शिल्पी, साहित्यकार, व्यवसायी, मजदूर कुछ भी क्यों न हो औरत को चबाने से बाज नहीं आता।" "यहाँ बनाये गये कानुन भी पुरूष के पक्ष में है। स्त्रीवाद इसके विरोध में जागृति चेतना निर्माण कर रहा

नारी सामर्थ्य की खोज एवं पहचान :

नारी के सामर्थ्य की खोज कराके उसे उससे परिचित कराना स्त्रीवाद का प्रमुख उद्देश्य है। पुरूष प्रधान समाज नारी को मात्र एक वस्तु के रूप में देखना पसंद करता है। उसके अंग-प्रत्यंग का वह मूल्य करता है, लेकिन उसके अन्दर जो मेघा है, जो सामर्थ्य उसे उसका कोई मूल्य नहीं रहता। आज स्त्री को

उसके सामर्थ्य का एहसास हो रहा है। वह नौकरियों में उच्च स्थानों पर अपना अधिकार सिद्ध कर रही है। कला, खेल, राजनीति आदि सभी क्षेत्रों में स्त्री अपनी क्षमताओं को सिद्ध कर रही है। अपने अधिकारों के प्रति वह जागरूक दिखाई दे रही है। अगर उसे अधिकारों से वंचित रखने का प्रयास किया तो उसके विरोध **में** संघर्ष करने का सामर्थ्य उसमें आ गया है। उसका श्रेय स्त्रीवाद को ही है।

स्त्री की मानसिकता में परिवर्तन :

नारी की स्थिति में परिवर्तन लाने के लिए सर्वप्रथम नारी की मानसिकता में परिवर्तन आवश्यक है। नारी ने पुरूष को अपने जीवन में सर्वेसर्वा मान लिया है। पुरूष के बिना वह स्वयं को अधूरा मानती है। बेटी, पत्नी या माँ बनकर रहना ही उसे स्वीकार है। अपने अस्तित्त्व को पुर्णतः नष्ट करके पुरूष के वर्चस्व में वह तथाकथित अच्छा जीवन गुजारती है। हर नारी को स्त्री-सुलभ गुणों का एहसास कराकर उसे तथाकथित आदर्श स्त्री में ढालनेवाली औरत ही होती है। अपने अंदर एक हीन भावना लेकर आज भी औरत जी रही है। सुदेश बत्रा के अनुसार, "स्त्रियों को चाहिए कि वे पुरूषों को झुकाने से पहले अपना हीन भाव दूर करे। समाज में ऐसी स्थितियाँ लाने की जिम्मेदारी स्त्रियों की है। उन्हें पुरूषों का साथ और सहारा मिले उनके पैर की ठोकर नहीं। यदि किसी कारण उन्हें सहारा मिले या मिलकर छिन जाय तो उन्हें अपने हाथ पैरों, अपने दिल दिमाग का सहारा लेना है। तभी उन्हें समाज की शंकित और हिन निगाहों **से** मुक्ति मिलेंगी और यही भारतीय नारी का सही मुक्ति आन्दोलन होगा।" "नारी की परम्परागत मानसिकता में परिवर्तन लाकर उसे अपने 'स्व' या अस्तित्त्व का साक्षात्कार स्त्रीवाद करा रहा है। नारीवाद एक विचारधारा या चिंतन मात्र है जो स्त्रियों को उसकी परम्परागत भूमिका के विषय में पुनः सोचकर उसके स्वतंत्र अस्तित्त्व की पहचान स्थापित करने के लिए उसे नयी दिशा प्रदान करता है। आधुनिक कालखंड में अनेक प्रश्न समाज के सामने उपस्थित हो रहे है। इन प्रश्नों का सामना करते हुए आज का व्यक्ति विभिन्न सामाजिक आन्दोलनों का निर्माण कर रहा है। इन सामाजिक आन्दोलनों का प्रभाव स्त्रीवाद विचारधारा पर होता है।

उदारतावादी स्त्रीवाद :

सन १९९० के पश्चात प्रभावी रूप में सामने आना वाला विचार प्रवाह उदारतावादी स्त्रीवाद है। इस विचार प्रवाह की अपनी एक लम्बी परंपरा है। " मेरी वोलस्नक्राफ्ट, हैरियट टेलर, जे. एस. मिल, मागरिट, फुल्लर, हैरियट मार्टिनों से ल्युक्रेशिया मॉट, एलिझाबेध कॅडी, स्टॅटन, सुसान मॉलर तक उदारतावादी स्त्री वादीयों की लम्बी परम्परा रही है। हमने उदारतावादी तत्त्वों से समता, स्वातंत्र्य, विवेक आदि मूल्यों का स्वीकार करके और उसके आधार बनाकर स्त्री का समाज में स्थान की खोज की है।

उदारतावादी स्त्रीवाद में निजी जीवन के स्वास्थ, शांति एवं सहयोग को महत्त्व दिया है। पूँजीवादी व्यवस्था में व्यक्ति विकास के लिए जो विभिन्न मार्ग निर्माण किए है उनको अपना कर स्त्री ने अपना विकास करना चाहिए। इसलिए यहाँ पूँजीपती व्यवस्था का विरोध न करते हुए उसमें कुछ सुधारों की आवश्यकता पर जोर दिया गया है। निजी सम्पत्ती पर नारी का हक होना चाहिए। स्त्री पुरूष समानता एवं स्त्री स्वातंत्र्य इन्होंने प्रमुख माँग की है। स्त्री और पुरूष में कोई अंतर न होने के कारण उदारतावादी स्त्रीवादीयों ने समान नागरी हक्क, मताधिकार, शिक्षा आदि अधिकार स्त्री को प्राप्त होने के लिए प्रयास किए।

सार्वजनिक जीवन में नारी को पुरूष के समान स्थान प्राप्त होने के पश्चात वह पुरूष के साथ आत्मविश्वास के साथ चलेगी ऐसा इन्हें विश्वास है। डॉ. मंगला वानखेडे के अनुसार, "समस्त समाज व्यवस्था परिवर्तित करने की अपेक्षा स्त्री को पुरूषों के समान अवसर प्राप्त होने पर जोर I देनेवाला यह विचारप्रवाह है। मानव में वैचारिक क्षमता होने के कारण उसे स्त्री मुक्ति का महत्त्व समझ में आ सकता है। समान अवसर प्राप्त हो जाने के पश्चात नारी के विकास की जिम्मेदारी उसकी स्वयं की होगी। गुणवत्ता लिंग निरपेक्ष होने कारण वह इसके लिए समाज को दोषी नहीं मान सकेगी। उसे उसकी बुद्धि का, गुणों का प्रयोग करने का अवसर प्राप्त हो।

उदारतावादी स्त्रीवाद ने स्त्री-पुरूष समानता का महत्त्वपूर्ण विचार व्यक्त करके अपना अलग स्थान बना लिया है। सरला माहेश्वरी ने कहा है, "मेरी वाल स्थनक्राक्ट ने सबसे पहले इस बात को स्वीकारने से इंकार किया कि स्त्रियाँ बुद्धि की मामले में पुरूषों से कमजोर है अथवा छुई मुई पन, नाजुकता तथा सतहीपन उनका नैसर्गिक गुण है। यदि पुरूष और महिलाएँ बुद्धि के समान अधिकारी है तो उसका प्रयोग करने की शिक्षा भी उन्हें समान रूप से दी जानी चाहिए। स्त्रियाँ सिर्फ पुरूषों के भोग की वस्तु नही है, बल्कि एक स्वतंत्र मानुषी है जो बौद्धिक शिक्षा पाने में समर्थ तथा उसकी अधिकारी भी है। चुँकि पुरुषों और महिलाओं की समान मानसिकता ईश्वर प्रदत्त बुद्धि के अधिकार की हिस्सेदारी पर आधारित है, इन दोनों लिंगों के नैसर्गिक गुण भी समान होने चाहिए।" "वर्ग, वर्ण पुरूष- प्रधानता आदि को आधार बनाकर स्त्री का जो शोषण किया जाता है उसकी गंभीरता से यहाँ चर्चा नहीं की लेकिन यहाँ जो विचार व्यक्त किए गए है वह अपने आप में महत्त्वपूर्ण है।

मार्क्सवादी / समाजवादी स्त्रीवाद :

नारी की स्थिति के संदर्भ में सोचते हुए मार्क के चिंतन को आधार बनाकर नारी के सर्वहारा व्यक्तित्त्व को अंकित करनेवाला विचार मार्क्सवादी स्त्रीवाद है। कार्लमार्क्स ने शोषितों की स्थिति पर विचार व्यक्त किये है। एक बात महत्त्वपूर्ण है कि मार्क्स 'स्त्रीवादी' नहीं थे लेकिन नारी की समाज में जो प्रतिकूल परिस्थिति है उस पर उन्होंने निश्चित विचार किया था। सरला माहेश्वरी के अनुसार, "मार्क्स ने कई स्थानों पर समाज में नारियों की स्थिति को सामाजिक प्रगति के सूचकांक के रूप में देखने की बात कही थी। इसी से चलता है कि वे नारीवादी न होने पर भी नारी मुक्ति के विरोधी नहीं थे।" "इसलिए नारीवादी विचारधारा में मार्क्स के विचारों को अलग महत्त्व है।

मार्क्सवादी स्त्रीवाद में एंगेल्स के विचार अहम् भूमिका अदा करते है। इस मामले में खासतौर एंगेल्स की पुस्तक परिवार, निजी संपत्ति और राज्य की उत्पत्ती को नारीवादी विमर्श के एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण योगदान के रूप में देखा जा सकता है। इस पुस्तक में एंगेल्स ने नारियों संबंधी कुछ अवधारणाओं को स्पष्ट किया है। नारी की स्थिति के संदर्भ में वैज्ञानिक आधार के माध्यम से प्रकाश डाला है। इनके अनुसार नारी आर्थिक असमानता के कारण गुलामी का जीवन जी रही है। नारी की स्थिति परिवार में मजदूर की तरह होती है। परिवार के पुरूष के हाथों में सभी आर्थिक सूत्र केंद्रित होने के कारण नारी को परिवार में कनिष्ठ स्थान प्राप्त होता है। एंगेल्स के अनुसार, "परिवार के दायरे में पति बुर्जुआ होता है और पत्नी सर्वहारा होती है। "

मार्क्स एवं एंगेल्स के अतिरिक्त मार्क्सवादी स्त्रीवादी को अन्य विचारवंतों के विचार की लम्बी परम्परा प्राप्त होती है। कुरियर, साँ सीमाँवादी, रॉबर्ट, ओपेन, विल्यम थाम्सन जैसे मार्क्सवादी विचारवंतों ने स्त्रीवादी सवालों का स्वतंत्रता से विचार किया है आरंभिक कालखंड से ही स्त्री – पुरूष की दासी थी। यह परम्परागत मान्यता मार्क्सवादी को मंजूर नहीं है। स्त्रियों की मुक्ति की पहली शर्त यह थी की पूरी नारी जाति फिर से सार्वजनिक उद्योग में प्रवेश करे और इसके लिए यह आवश्यक है कि समाज की आर्थिक इकाई होने का वैयक्तिक परिवार का गुण नष्ट कर दिया जाए। मार्क्सवादी स्त्रीवादीयों ने माना है कि नारी की स्थिति मात्र आर्थिक विषमता नष्ट होने से ही सुधर सकती है। पूँजीवादी व्यवस्था जब अस्तित्व में आती है तब तक नारी को शोषित का ही जीवन व्यतीत करना पड़ेगा। मार्क्सवादी न नारी मुक्ति के प्रश्न समाज के बहुत ही सुसंगत वैज्ञानिक विश्लेषण के जरिये सामाजिक उत्पादन संबंधों के प्रश्न तथा महिलाओं की आर्थिक स्वतंत्रता के प्रश्न के साथ जोड़ा। जब स्त्री आर्थिक पारतंत्र्य से मुक्त हो जाएंगी तब जीवन के विभिन्न बन्धन भी अपने आप नष्ट हो जायेंगे। स्त्री के आर्थिक स्वतंत्रता के संदर्भ में प्रभा खेतान कहती है, "मुक्ति की पहली शर्त है कि स्त्री आर्थिक रूप से स्वावलंबी हो। यदि इस शर्त को कोई औरत पूरा कर ले तो वह अपनी जिंदगी की आधी से अधिक लड़ाई जीत लेती है।" परिवार में स्त्री पर जो जिम्मेदारियाँ होती है, उनसे वह मुक्त हो जाएगी। मार्क्सवादी स्त्रीवादी के अनुसार लैंगिक विषमता का प्रश्न महत्त्वपूर्ण है, लेकिन लैंगिक विषमता नष्ट करने की इच्छा रखकर यह विषमता नष्ट नहीं होनेवाली। इसके लिए इतिहास में जिस क्रम से स्त्री आर्थिक पारंतंत्र्य में जकड़ी गयी उसी क्रम से मुक्त होना आवश्यक है। मार्क्सवादी स्त्रीवाद ने स्त्री शोषण के विभिन्न पहलुओं को स्पष्ट करते हए इस बात को स्पष्ट किया कि शोषित वर्ग की स्त्री को मुक्त करने का ध्येय सामने रखकर ही स्त्री मुक्ति का ध्येय पूर्ण हो सकता है। जैसे-जैसे सर्वहारा समाज का विस्तार होगा, नारी का रास्ता प्रशस्त होगा तथा सामाजिक क्रांति के जरिए जब पूँजीवादी आर्थिक व्यवस्था समाप्त होगी तो उसके साथ ही पुरूष श्रेष्ठता की दीर्घकालीन परम्परा की जड़े भी पूरी तरह समाप्त हो जायेगी।

निष्कर्ष रूप में मार्क्सवादी स्त्रीवाद ने स्त्री शोषण के आर्थिक पहलू पर प्रकाश डाला। आज स्त्री बड़ी यात्रा में आर्थिक दृष्टि में स्वावलंबी बन रही है। लेकिन उसकी शोषण प्रक्रिया में कोई परिवर्तन नहीं हुआ है। लैंगिक अत्याचार की शिकार वह निरन्तर हो रही है। यह नष्ट करने के लिए पुरूष प्रधान व्यवस्था में परिवर्तन होना आवश्यक है। मार्क्सवादी स्त्रीवाद पुरूष विरोधी नहीं पुरूष के सत्ता एवं वर्चस्व के विरोधी है।

विद्रोही स्त्रीवाद :

विद्रोही स्त्रीवाद स्त्री अनुभवों पर आधारित है। स्त्री जीवन में स्त्री होने के नाते कुछ अनुभव होते है, उनको आधार बनाकर लिखा गया साहित्य यह स्त्री द्वारा स्त्री के लिए निर्माण किया हुआ मुक्ति का संदेश है। स्त्री के अनुभव एहसास, जीवन संबंधी दृष्टिकोण इत्यादि को यहाँ महत्त्व दिया जाता है। विद्रोही स्त्रीवाद स्त्री – शोषण का मूल पुरूषसत्ता में मानता है। उनके अनुसार पुरूष प्रधान समाज व्यवस्था, पुरूषों का हित ध्यान में रखकर ही कानून बनाती है। सरला माहेश्वरी के अनुसार, "वे राज सत्ता के पूरे ढाँचे को अनिवार्य रूप से पितृसत्तात्मक ढाँचे के साथ जोड़कर देखती है और यह मानती है कि राज सत्ता के इस ढाँचे को पुरूष ने बनाया है और यह ढाँचा महिलाओं के बजाय पुरूषों के हितों का ध्यान रखता है।" नारी के इस समस्त शोषण को समाप्त करने के लिए पारम्पारिक परिवार के ढाँचे को समाप्त करना

आवश्यक है, ऐसी इस स्त्रीवादी की धारणा है। विद्रोही नारीवादी परिवार के ढाँचे मात्र को ही नारी के लिए कारागार के रूप में देखते है। वे परिवार के इस ढांचे को तोड़ देने की दलील देते है। पुरूष का वर्चस्व सार्वजनिक क्षेत्र तक सीमित न होकर निजी जीवन के कामसंबंध, विवाह, परिवार आदि में भी होता है। उग्रवादी स्त्रीवाद के अनुसार पुरूष का वर्चस्व मात्र राजनीति, अर्थव्यवस्था, समाज आदि सार्वजनिक जगह तक सीमित न होकर नीजी जीवन में कामसंबंध, विवाह, परिवार, स्त्री-पुरूष के परस्पर संबंध में भी होता है।

जब तक पुरूषों का यह वर्चस्व समाप्त नहीं होगा। तब तक स्त्री - मुक्ति संभव नहीं है। आज आर्थिक समानता लाकर इस समाज को बदला नहीं जा सकता। इसके मूल में छिपी लिंगभेद की भावना नष्ट करने से स्त्री मुक्ति संभव है। सिर्फ आर्थिक परिवर्तन मात्र से समाज की पितृसत्तात्मक सत्ता का जड़ जमाया हुआ ढाँचा बदल नहीं सकता।

ब्रिटिश स्त्रीवाद :

ब्रिटिश स्त्रीवाद का स्वरूप राजनैतिक है। सामाजिक एवं सांस्कृतिक क्षेत्र में परिवर्तन इस विचारधारा का लक्ष्य है। डॉ. मंगल वानखेडे के अनुसार, "अमेरिकी स्त्रीवाद की निर्मिती प्रमुखतः वहाँ के विश्वविद्यालय के अंग्रेजी साहित्य के विभाग तथा स्त्री अभ्यास केन्द्र से हुई है। इसके विपरीत ब्रिटिश स्त्रीवाद की निर्मिती जनसंचार माध्यम राजनीतिक गुट ... आदि से हुई है। '

निष्कर्ष

यहाँ स्त्री समस्याओं के प्रति जागृत दृष्टिकोण रखकर स्त्रीयों की स्थिति में सुधार लाने के लिए प्रयास किए गए है। मानव समाज में स्त्रियों की संख्या लगभग ५० प्रतिशत के आसपास है। स्त्री पुरूषों के साथ हजारों सा से विभिन्न अनुभवों के साथ जीवन व्यतीत कर रही है। लेकिन इतिहास पर दृष्टि डाले तो यह दिखाई देता है कि स्त्रियों के अस्तित्व को हमेशा नकारा गया है। आज कुछ वर्षों से स्त्रियों की समस्याओं एवं उसकी परिस्थितियों के संदर्भ में विस्तार से अध्ययन हो रहा है। स्त्री के व्यक्तित्त्व के निर्माण के लिए संघर्ष हो रहा है। स्त्री चाहे पाश्चात्य हो, चाहे भारतीय अपने अस्तित्त्व के लिए उसे लंबा संघर्ष करना पड़ा है। भारतीय स्त्री मुक्ती के संघर्ष में विभिन्न समाज सुधारकों का, सामाजिक संस्थाओं का, साहित्य का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। bसमाज में स्त्री के प्रति जागृति निर्माण करना तथा स्त्री के स्वत्त्व को, अस्तित्त्व को स्थापित करने के प्रयास अर्थात स्त्रीवाद है। स्त्रीवादी विचारधारा से प्रभावित साहित्य स्त्रीवादी साहित्य कहलाता है। नारी के व्यक्तित्त्व के पहचान के लिए आन्दोलन हो रहे हैं। इस समस्त संघर्ष का एक मात्र मुख्य उद्देश्य नारी के लिए सुखद भविष्य निर्माण करना है। स्त्री को निष्पक्ष न्याय तथा उनके प्रति स्वस्थ दृष्टिकोण के निर्माण के लिए समाज में व्याप्त लिंग भेद समाप्त करने का कार्य इन विभिन्न आंदोलनों के अन्तर्गत होने लगा। स्त्री के स्थिति के पीछे मात्र उसका स्त्री जन्म है। स्त्री जन्म से स्त्रीत्त्व का भाव लेकर नहीं आती बल्कि उसके आसपास का परिवेश उस इस मानसिकता में परिवर्तित करता है।

संदर्भ

1. द्विवेदी, हजारी प्रसाद, बाण भट्ट की आत्म कथा, पृ० 110

2. पंडित श्री वाई एन झा (2010) रामायण, महामाया पब्लिकेशन्स जालन्धर, पृ० 36, 87

3. पंडित श्री वाई एन झा (2010) महाभारत, महामाया पब्लिकेशन्स जालन्धर, पृ0 86,89

4. पाण्डे, कृष्णचन्द (1975) प्रेमचन्द के जीवन दर्शन के विधायक तत्व, सामयिक प्रकाशन इलाहाबाद पृ० 151

5. पाण्डे, दिलीप (2009) हिन्दी साहित्य का इतिहास, उपकार प्रकाशन आगरा, पृ0 49, 55,

6. पाण्डे, लक्ष्मीकान्त (1981) प्रेमचन्द साहित्य संदर्भ, राम बाग कानपूर, पृ0 342

7. प्रभाकर, विष्णु (2001) मैं नारी हूँ, सामयिक प्रकाशन नई दिल्ली, पृ0 5, 6, 10

8. प्रसाद, वेणी (1972) हिन्दुस्तान की पुरानी सभ्यता, प्रतिभा प्रकाशन दिल्ली, पृ0 47, 49

9. प्रसाद, जयशंकर कामायनी, पृ0 14, 17

10. भटटनागर, रामरतन(1990) प्रेमचन्द कथा साहित्य : समीक्षा और मूल्यांकन, समीक्षा प्रकाशन, दिल्ली, पृ0 75, 76

11. भारद्वाज, श्री नारायण (1992) प्रेमचन्द के उपन्यास, गिरनार प्रकाशन गुजरात, पृ0 7, 58

12. मधु, मदनलाल (1985) उपन्यासकार गोर्की और प्रेमचन्द, प्रगति प्रकाशन मास्को, पृ०

13. मदान, इन्द्रनाथ (1986) प्रेमचन्द : एक विवेचन, राजकमल प्रकाशन दिल्ली, पृ0 157, 366

14. मदन, गोपाल (2012) प्रेमचन्द की आत्मकथा, प्रभात प्रकाशन नई दिल्ली, पृ0 10, 12

15. नेहरु, ज्वाहलाल (1965) हिन्दुस्तान की कहानी, ज्ञानमण्डल प्रकाशन इलाहाबाद, पृ0 357 नसरीन, तस्लीमा (2010) लज्जा, वाणी प्रकाशन नई दिल्ली, पृ० 27, 30,